ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 186-188

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति की वर्तमान समय में प्रासंगिकता

समित कुमार सिन्हा

निदेशक, संस्कार उच्च विभाग शोध संस्थान, बलिया (उ.प्र.)भारत

Received- 01.12.2019, Revised- 05.12.2019, Accepted - 10.12.2019 E-mail: pvishwakarma534@gmail-com

सारांश : *प्राचीनकाल में भारत को बौद्धिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में जो गौरव प्राप्त था, उसका श्रेय भारत की प्राचीन शिक्षा–पद्धति को ही है। अपनी विशिष्ट शिक्षा–पद्धति के कारण ही भारत में सदियो तक न केवल विश्व का सांस्कृतिक नेतृत्व किया, बल्कि उद्योग–धन्धों, कला–कौशल आदि में भी वह अग्रणी रहा। भारतीय संस्कृति तथा दर्शन की विजय पताका जावा, सुमात्रा, स्याम, चीन, जापान, कोरिया, तिब्बत तथा मध्य एशिया के देशों में सहस्रों वर्ष तक लहराती रही। भारतीय–कला का आलोक भारत की सीमा में ही आबद्ध नहीं थी, इसकी ज्योति से पूर्वी एशिया के समस्त देश जगमग उठे थे। वस्तुतः भारतीय–कला के पूर्ण दर्शन भारत के बाहर भी उपलब्ध हैं। भौतिक ज्ञान के क्षेत्र में भारतीय विद्वानों की ख्याति दूर–दूर देश में फैली हुई थी। अंकगणित, बीजगणित, न्यायमिति, औषधि–शास्त्र आदि विषयों में भारत नये ज्ञान का अन्वेषक तथा नये विचारों का प्रवर्तक था। आधुनिक अंकगणित तथा बीजगणित के अंकुर भारतभूमि में ही प्रस्फुटित हुए। भारत ही के गणितज्ञ ने सर्वप्रथम शून्य (0) संख्या की कल्पना की। गणितशास्त्र के इतिहास में इस संख्या के अन्वेषण तथा निर्धारण से बढ़कर अन्य कोई घटना नहीं। शून्य की दृष्टि ने गणितज्ञों को अपूर्व शक्ति प्रदान की। इसी तरह दशमलव के अन्वेषण से भी अंकगणित की बड़ी अभिवृद्धि हुई। ज्यामिति के क्षेत्र में भारतीय ऋग्वैदिक युग से ही प्रयत्नशील थे।*

कुंजी शब्द– बौद्धिक सांस्कृतिक, प्राचीन शिक्षा, पद्धति, उद्योग–धन्धों, कला–कौशल, भारतीय संस्कृति, न्यायमिति।

आपस्तम्ब, बौधायन तथा कात्यायन की कृतियों में त्रिकोण, चतुर्भुज, वर्ग आदि के विवरण हैं, किन्तु ज्यामिति के क्षेत्र में भारतीयों की अपेक्षा यूनानी वैज्ञानिक आगे बढ़ गये। गणित तथा बीजगणित में भारतीय उत्तरोतर प्रगतिशील होते गये। आर्यभट्ट (5वीं इसवीं शती), ब्रह्मगुप्त (628 ई0), भास्कर (1114 ई0) गणित तथा ज्योतिष शास्त्र के ज्वलंत रत्न हैं। भारत से ही गणित–सम्बन्धी ज्ञान अरब तथा अरब से होकर समस्त यूरोप में प्रसारित हुआ। भारतीय संख्याएं अरबी भाषा में 'हिन्दसा' के नाम से प्रसिद्ध हुई, जो कि 'हिन्द' की पर्यायवाची है। भारतीय विद्यालयों में शिक्षित पाणिनि तथा कौटिल्य की विद्वता तथा प्रतिभा का कायल आज समस्त विश्व है। पाणिनि का व्याकरण ''मानव–मस्तिष्क की श्रेष्ठतम कृतियों में एक है।'' तक्षशिला के एक ब्राह्मण–विद्यार्थी ने न केवल एक अपूर्व अर्थशास्त्र की रचना की, बल्कि वह एक सफल राजनीतिज्ञ हुआ, जिसने एक विशाल साम्राज्य की संस्थापना की। औषधि–शास्त्र में भारतीय चिकित्सकों ने अपूर्व क्षमता उपलब्ध की थी।

परिवर्तन प्रकृति का प्रथम व अनिवार्य नियम है। परिवर्तन में ही प्रगति या विकास की जड़ समाहित है। आज मनुष्य की प्रगति, समस्त सामाजिक एवं भौतिक विकास एक दिन में नहीं हुआ है। सृष्टि के आरम्भ से आज के दिन तक विकास के अनेक सोपानों को पार करती हुई हमारी सभ्यता एवं संस्कृति इस स्तर पर पहुँचती है। हमने अतीत में जो अनुभव प्राप्त किये, उससे समय–समय पर लाभ उठाने की आवश्यकता है। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। आज भी शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति कहीं न कहीं अपनी छाप छोड़ रखी है, जिसे हम बिना किसी संशोधन के ही स्वीकार करते हैं, किन्तु वहीं पर आधुनिक शिक्षा में प्राचीन पद्धति से काफी परिवर्तन दिखाई पड़ता है।

प्राचीन काल की शिक्षा वर्ण व्यवस्था पर आधारित थी, वर्णों के अनुसार शिक्षा का प्रावधान किया गया था। नारी शिक्षा के सम्बन्ध में प्राचीन काल की शिक्षा की उपादेयता अपेक्षाकृत कम थी। प्रायः उच्च वर्ग या कुलीन वर्ग के सम्पन्न विद्यार्थी ही शिक्षा ग्रहण कर पाते थे। सामान्य एवं निम्न वर्ग के लोग प्रायः शिक्षा से वंचित ही रहते थे।

वैदिक शिक्षा से तात्पर्य सिर मुडाने, लंगोटी, बांधने, स्त्रियों से बचने, श्लोकों का रटन्त स्मरण करने, भिक्षा माँगने आदि से नहीं है। उच्च विचारों, स्वानुशासन, स्नेह व श्रद्धा पर आधारित अध्यापक–छात्र सम्बन्ध, नगरों के कोलाहल से दूर शान्त व प्राकृतिक परिसर, छोटी कक्षायें, व्यस्त दिनचर्या, अच्छी आदतों का निर्माण, मानवता एवं विश्वबंधुत्व के भाव से परिपूर्ण पाठ्यवस्तु, प्रश्नोत्तर व वाद–विवाद विधियों का प्रयोग, सादा, संयमित एवं दुर्व्यसनों से रहित जीवन आदि अनेक ऐसी बातें हैं जो आज भी शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं।

प्रत्येक समाज के कुछ सर्वमान्य सिद्धान्त और

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

आदर्श होते हैं शिक्षा उन्हीं को लक्ष्य मानकर अग्रसर होती है। वैदिक कालीन शिक्षा में जो आदर्शवादिता, नैतिकता, विश्वबन्धुत्व और सहिष्णुता तथा ज्ञान की ऊचाइयों को पाने की जो झलक दिखलाई पड़ती है वह आधुनिक भारत के नवजीवन और समाज के लिए नितांत प्रासंगिक प्रतीत होती है। आज भी भारतीय समाज में अध्यात्म, नैतिकता, सहिष्णुता, सदाचारिता, सत्य, अहिंसा और त्याग तथा चारित्रिक उत्थान को महत्व दिया जाता है। हम आज भी धर्म, ईश्वर और निष्काम कर्म को महत्व देते हैं। हम धन की अपेक्षा चरित्र को, भौतिकता की अपेक्षा आध्यात्मिकता को एवं विज्ञान की अपेक्षा दर्शन को श्रेष्ठतर समझते हैं। जब आज संपूर्ण विश्व धन शक्ति, हिंसा और कूटनीति में आस्था रखता है–हम प्रेम, सत्य, अहिंसा और तपस्या के समक्ष श्रद्धा से नतमस्तक हो जाते हैं। आज के घुटन भरे अशान्त और हिंसक समाज को वैदिक शिक्षा के आदर्शों का अनुकरण करने पर ही शांति एवं सुरक्षा प्राप्त हो सकती है।

प्राचीन शिक्षा प्रणाली में गुरु शिष्य सम्बन्धों की मधुरता और घनिष्ठता की मिसाल विश्वविख्यात है। गुरु के उच्च आदर्शों और ज्ञान की छाप शिष्यों पर पड़ती थी। विद्या दान गुरु का धार्मिक एवं सामाजिक कर्तव्य था। इसके मूल में कोई स्वार्थ भावना नहीं थी। फलस्वरूप शिष्य भी उतनी ही तत्परता से ज्ञानार्जन करते थे और गुरु के आदर्शों का अनुसरण करते थे। गुरु और शिष्य के सम्बन्ध परस्पर प्रेम और श्रद्धा से आबद्ध थे, परिणाम स्वरूप शैक्षिक वातावरण पूरी तरह से शांत था। आज इन बातों पर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है क्योंकि शैक्षिक वातावरण अत्यन्त विषम हो चुका है और अनुशासनहीनता बढ़ती जा रही है। छात्रों में अनुशासन की भावना का विकास और वैदिक कालीन गुरु–शिष्य सम्बन्धों की पुनर्स्थापना करके ही इन दोषों से मुक्ति पाने की आशा की जा सकती है। यद्यपि यह सत्य है कि छात्र और शिक्षक प्राचीन वैदिक युग के आदर्श पर नहीं पहुँच सकते फिर भी दृढ़ निश्चय से उसकी ओर अग्रसर होकर अवश्य ही कुछ सफलता पाई जा सकती है। यह सब तभी संभव हो सकता है जब छात्र गुरु–शिष्य सम्बन्धी वैदिक आदर्श के प्रति निष्ठावान बने और शिक्षक उस आदर्श के अनुसार सरस्वती साधना में लीन होकर सरल जीवन व्यतीत करें। इससे गुरु और शिष्य के सम्बन्धों में वही श्रद्धा और स्नेह का वातावरण उत्पन्न होगा।

वैदिक काल में शिक्षण संस्थायें प्रायः बस्ती और नगरों से दूर शांत वातावरण में स्थित होती थी। बस्ती के कोलाहल का शिक्षा संस्थाओं पर कोई असर नहीं पड़ता था। विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण और सर्वांगीण विकास में गुरुकुलों का महत्वपूर्ण योगदान था। प्रकृति के सुरम्य वातावरण में विद्यार्थी अपना शारीरिक एवं मानसिक विकास करने में सक्षम होते थे। विद्यार्थियों का सादा और नियमित संयमित तपस्यापूर्ण जीवन उन्हें ज्ञान की ऊंचाइयों तक ले जाता था। समाज के घुटनपूर्ण वातावरण से वैदिक काल के विद्यार्थी सदैव दूर रहते थे। भौतिक सुख साधनों और आमोद–प्रमोद का उन पर कोई प्रभाव नहीं था। परिणामस्वरूप वे अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रहे। आधुनिक युग में नगरीकरण के प्रभाव के कारण सभी व्यक्तियों में नगर में निवास करने की प्रवृत्ति सबल हो गई है। ऐसी दशा में आज की शिक्षा संस्थाओं की नगरों से पृथकता संभव नहीं है, परन्तु फिर भी उनका निर्माण नगरों के कोलाहल और गंदगी से दूर किसी शान्त स्वच्छ, स्वास्थ्यकर एवं प्राकृतिक वातावरण में किया जा सकता है। इस प्रकार की शिक्षा संस्थायें न केवल छात्रों के शारीरिक और मानसिक विकास में योगदान देंगी वरन् उनकी नगरों के प्रतिदिन के झगड़ों, राजनैतिक कुचक्रों और अवांछनीय प्रवृत्तियों से रक्षा भी करेंगी। शिक्षा संस्थाओं की स्थापना बस्ती से दूर की जा सकती है। वैदिक कालीन भारत के छात्र सादा, सरल और संयमी जीवन व्यतीत करते थे। आधुनिक भारत में उनका जीवन भले ही अक्षरशः अनुकरणीय न हो पर ग्रहणीय अवश्य है। आज के छात्रों के जीवन में आमूल परिवर्तन हो गया है। उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य शिक्षा प्राप्त करना नहीं वरन् मनोरंजन के विभिन्न साधन तलाशना है ऐसे में उसका जीवन ऐश्वर्यपूर्ण हो गया है। ऐसी परिस्थिति में प्राचीन काल के छात्रों के उदाहरण को आज के छात्रों के समक्ष रखकर उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन किया जाना आवश्यक है।

आधुनिक भारतीय शिक्षा का स्वरूप धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक है। आधुनिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में विविध पाठ्य विषय सम्मिलित किये गये, जो व्यवसायपरक और व्यावहारिक हैं। आधुनिक दृष्टि से आज का पाठ्यक्रम भले ही उपयोगी कहा जाये परंतु कई विषयों की उपेक्षा यहाँ साफ–साफ दिखाई देती है। जैसे वैदिक साहित्य शाश्वत साहित्य है जिसमें मानवता, विश्वबन्धुत्व और मानव शांति के तत्व सम्मिलित हैं। आधुनिक पाठ्यचर्या में इन्हें सम्मिलित किया जाना चाहिए। वैदिक पाठ्यक्रम में ऐसे बहुत सारे प्रकरण हैं जिन्हे आज की शिक्षा में समाविष्ट किया जा सकता है। ये आधुनिक भारत में सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास तथा विश्व शांति की स्थापना में सहायक हो सकते हैं। इसी प्रकार संस्कृत भाषा, संपूर्ण भारतीय भाषाओं की जननी है। उसकी उपेक्षा करना न्याय संगत नहीं है। संस्कृत भाषा और साहित्य में शांति,

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-11, No.-II, Issues-14 YEAR- Dec. -2019

मानवता और विश्वबन्धुत्व भ्रातृत्व की ऐसी अमूल्य निधियाँ हैं जिनको न केवल भारत के पाठ्यक्रम में वरन् सब देशों के पाठ्यक्रमों का अभिन्न अंग होना चाहिए। वैदिक पाठ्यक्रम से ऐसे अनेक तत्व ग्रहण किये जा सकते हैं जो आधुनिक भारत के नैतिक, राष्ट्रीय और सांस्कृतिक उत्कर्ष में अद्वितीय योगदान दे सकते हैं। आधुनिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में उपर्युक्त तत्वों को सम्मिलित करने से पाठ्यक्रम में मौलिकता की झलक दिखाई देगी अन्यथा हमारा पाठ्यक्रम पश्चिम से आयातित विचारों का पुलिंदा बनकर रह जायेगा। वैदिक शिक्षण विधियों में श्रवण, मनन, चिंतन, स्मरण, प्रवचन, प्रश्नोत्तर, व्याख्यान, वाद–विवाद जैसी शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता था। वैदिक काल में श्रवण, मनन और शुद्ध उच्चारण पर विशेष बल दिया जाता था, शिष्य अपने गुरु का अनुकरण करते थे। ये शिक्षण विधियाँ आज भी विभिन्न विषयों के पठन–पाठन में प्रयोग की जायें तो उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। प्राचीन शिक्षण पद्धति के कतिपय सिद्धान्त आज भी उपयोगी है। जैसे–छोटी कक्षायें, व्यक्तिगत ध्यान और अच्छी आदतों का निर्माण आदि।

सारांशतः कहा जा सकता है कि वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली उस समय की संसार की श्रेष्ठतम शिक्षा प्रणाली थी, परन्तु आज के भारतीय समाज के स्वरूप और उसकी भावी आवश्यकताओं की दृष्टि से कुछ तत्व ग्रहणीय हैं और कुछ त्याज्य है। ग्रहणीय तत्वों को हम गुण कहते हैं और त्याज्य गुणों को दोष। वैदिक शिक्षा पद्धति के प्रमुख ग्रहणीय तत्व हैं–निःशुल्क शिक्षा, व्यापक उद्देश्य, व्यापक पाठ्यचर्या, गुरु–शिष्यों का अनुशासित जीवन, गुरु–शिष्यों के मधुर सम्बन्ध और शिक्षण संस्थाओं की संस्कार प्रधान पद्धति और न ग्रहण करने योग्य तत्व हैं–शिक्षा की व्यवस्था में राज्य का उत्तरदायित्व न होना, आय के अनिश्चित स्रोत, भिक्षाटन, रटने पर अधिक बल और कठोर अनुशासन। हम वैदिक शिक्षा पद्धति के ग्रहणीय तत्वों को ग्रहण कर वर्तमान शिक्षा प्रणाली को प्रभावी बना सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आपस्तम्ब गृहसूत्र : सुदर्शनाचार्य की टीका सहित मैसूर गवर्मेन्ट संस्कृत लाइब्रेरी सीरिज।
2. अथर्ववेद संहिता : सं. डब्लू.डी. ह्नीटने, हारवर्ड विश्वविद्यालय, 1905
3. ऋग्वेद : सायण भाष्य संहित, सं. एफ. मैक्समूलर, 1890–92; 5 भाग, वैदिक संशोधन मण्डल, पूना, 1933–5
4. कल्याण : हिन्दू संस्कृति अंक, 1996
5. अल्तेकर, अ.सं. : प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, वाराणसी, 1980
6. अल्बेरुनी : तहकीक–मा लिल हिन्द, सचाउ का अनुवाद–अलवरुनीज इण्डिया हिन्दी अनुवाद–अलबेरुनी का भारज
7. ईश्वरी प्रसाद : प्राचीन भारतीय संस्कृति, मिनू पब्लिकेशन इलाहाबाद, 1984
8. जयशंकर प्रसाद मिश्र : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, वाराणसी, 1968
9. आर0के0 मुखर्जी : एजुकेशन इन एन्शियण्ट इण्डिया, वाराणसी, 1969
10. Mudaliar A. Lakshmanshwami :Education of India - Bombay, Asia Publishing House, 1960.
11. Mukherji, Radhakumud : Ancient Indian Education- Motilal Banarasidas. Delhi, 1951.
12. Naik, J.P. : The Role of Government of India in Education New Delhi, Ministry of Education, 1963.

*****